Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल व डॉ0 रामविलास शर्मा की दृष्टि में हिन्दी गद्य का विकास

डॉ0 राजेश कुमार मिश्र
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
मर्यादा देवी कन्या पी0 जी0 कालेज,
बिरगापुर, हनुमानगंज, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश,भारत।

सारांश– वैसे तो शुक्ल जी कोई भाषा शास्त्री न थे फिर भी भाषा के बोलचाल के रूप पर उन्होने अपनी दृष्टि रखी तथा जगह–जगह अपनी भाषा सम्बन्धी दृष्टि प्रकट की। ब्रज भाषा ही पहले गद्य की भी अभिव्यक्ति का माध्यम थी, साहित्य की रचना अधिकांशतः पद्य में ही होती थी– ''अतः भगवान का यह भी एक अनुग्रह समझना चाहिए कि यह भाषा विप्लव नही संगठित हुआ और खड़ी बोली जो कभी अलग और कभी ब्रज भाषा की गोद में हुआ और दिखाई पड़ जाती थी धीरे–धीरे व्यवहार की और शिष्ट भाषा होकर गद्य के नये मैदान में दौड़ पड़ी।''[1] जिस समय गद्य के लिए खड़ी बोली उठ खडी हुई उस समय तक गद्य का विकास नही हुआ था। उसका कोई साहित्य नहीं खड़ा था।''[2] देश के प्रचार के साथ ही दिल्ली की खडी बोली शिष्ट समुदाय के परस्पर व्यवहार की भाषा हो चली थी।
मुख्य शब्द– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ0 रामविलास शर्मा, हिन्दी, गद्य।

''मुगल सम्राज्य के ध्वंस से भी खडी बोली के फैलने में सहायता पहुंची। दिल्ली, आगरे आदि पछांही शहरो की समृद्धि नष्ट हो चली थी और लखनऊ, पटना, मुर्शिदाबाद आदि नई राजधानियां चमक उठीं। दिल्ली के आस–पास के प्रदेशों की हिन्दू व्यापारी जातियां जीविका के लिए लखनऊ, फैजाबाद, प्रयाग, काशी, पटना आदि पूरबी शहरों में फैलने लगी। उनके साथ–साथ उनकी बोलचाल की भाषा खड़ी बोली भी लगी चलती थी।''[3] शुक्ल जी कहते है ''किसी भाषा का साहित्य में व्यवाहार न होना इस बात का प्रमाण नहीं हैं कि उस भाषा का अस्तित्व ही नहीं था। उर्दू का रूप प्राप्त होने के पहले भी खड़ी बोली अपने देशी रुप में विद्यमान थी और अब भी बनी हुयी है।''[4] इस प्रकार शुक्ल जी न उर्दु तथा न मुसलमान न अंग्रेजों से खड़ी बोली का विकास मानते हैं बल्कि डा0 शर्मा की भंति

उसका अस्तित्व बोलचाल के रूप में पहले से ही मानते है। अतः खड़ी बोली गद्य भाषा के विकास के पीछे जो हल्का राजनैति पुट शुक्ल जी देखते हैं डा0 शर्मा भले न उससे सहमत हों पर उसके अस्तित्व के बारे में बोलचाल के रूप में पहले से भी मौजूद रहने वाली बात से दोनो विद्वान सहमत है। शुक्ल जी के भाषा के विकास (खड़ी बोली) के बारे में डा0 शर्मा ने कई सहमतियां व असहमतियां दी हैं।'' शुक्ल जी ने हिन्दी भाषा और गद्य के विकास को उस समाज के विकास के साथ देखने समझने की कोशिश की है जिसकी भाषा हिन्दी है। चाहे भाषा का इतिहास हो चाहे साहित्य का; समाज से अलग करके हम उसे नही समझ सकते।''[5] जब शर्मा जी लिखते है कि हिन्दी गद्य के विकास का सवाल हिन्दी भाषा के विकास हिन्दी उर्दू के परस्पर सम्बन्ध और भाषा के विकास में विभिन्न वर्गों की भूमिका आदि की समस्या के साथ जुड़ा हुआ है तब भाषा के साथ समाज व वर्गों के अटूट सम्बंधों का पता चलता है। शुक्ल जी के बारे में डा0 शर्मा कहते हैं ''हिन्दी भाषा और गद्य के विकास को समझने के लिए शुक्ल जी ने बोलचाल की भाषा जनता के व्यवहार में आने वाली भषा पर अपनी निगाह जमायी है। भाषा का मतलब सबसे पहले काम–काज की भाषा है साहित्य की भाषा और उस भाषा की विभिन्न शैलियां बाद को आती है।''[6] शुक्ल जी भाषा के स्वाभाविक रूप को ज्यादा महत्व देते थे। ' जायसी की भूमिका' में गढ़ी हुई प्राकृत से जायसी और तुलसी की स्वाभाविक भाषा की तुलना करते हुए उन्होंने लिखा है ''जायसी और तुलसी ने चलती भाषा में रचना की है; प्राकृत के समान व्याकरण के अनुसार गढ़ी हुई भाषा में नही'' ''किसी भाषा का रूप उसके व्याकरण और मूल शब्द भण्डार से निश्चित होता है। प्राकृतों का व्याकरण और शब्द भण्डार इतना मिलता जुलता है कि उन्हें अनेक भाषाएं न कहकर एक ही भाषा कहना ज्यादा सही होगा''[7] शर्मा जी की पैठ भाषा के क्षेत्र में अधिक थी और इसलिए वो किसी भाषा के व्याकरण से उसके बोलचाल और बोलचाल से अन्य भाषाओं से समानता ढूंढ़ कर अन्त में उसे एक परिवार से जोड़ ले जाने का प्रयास करने लगते है। उनका भाषा के प्रति परिवार केन्द्रित दृष्टिकोंण आज भी विवाद का विषय बन गया है। 'आलोचना त्रैमासिक' के सहस्त्राब्दी अंक पांच 2001 अप्रैल–जून वाले अंक में 'भगवान सिंह' का लेख छपा है जिसमें उन्होंने अनेक युरोपीय विद्वानों से तर्क देकर शर्मा जी के परिवारवाद पर प्रहार करते है '' परिवार की अवधारणा अपने की असंतुलन और भार से पुनः ध्वस्त हो जाती है। जो रही सही कसर थी उसे 'बोएज' आदि ने पूरा कर ही दिया था।'' 'बोएज लिखते हैं '' भाषा परिवार का निर्माण एक सुदीर्घ प्रक्रिया है... अतः यह स्वाभाविक है कि अपनी मूल विशेषताओं का विकास करते समय विभिन्न भाषा–समुदाय एक दूसरे के सम्पर्क में आये ... कोई भाषा परिवार किसी आदि भाषा की शाखाओं का समूह नहीं है; कोई भाषा परिवार किसी खास नस्ल के लोगों की भाषाओं का समूल न पहले कभी

रहा है न आज है। परिवार शब्द ही भ्रान्तिपूर्ण है।"[8] जब अपने साहित्य के इतिहास में गद्य के विकास में शुक्ल जी लिखते हैं कि भोज के समय से लेकर हम्मीरदेव के समय तक अपभ्रंश काव्यों की जो परम्परा चलती रही उसके भीतर खड़ी बोली के प्राचीन रूप की झलक अनेक पद्यों में झलकती हैं तब शर्मा जी इसका समर्थन करते हैं। परन्तु जब वो यह लिखते है इस अपभ्रंश या प्राकृताभाष हिन्दी का अभिप्राय यह है कि उस समय की ठीक बोलचाल की भाषा नही हैं जिस समय की इसकी रचनांए हैं तब डॉ0 शर्मा कहते हैं '' भाषा का साहित्य न मिलने से यह साबित नही होता है कि वह भाषा बोली भी न जाती थी। लिखित साहित्य के आधार पर ही भाषा की प्राचीनता निश्चित नही की जा सकती। सामाजिक विकास के साथ–साथ भाषा नये शब्द लेती है; कुछ शब्द छोड़ती है; समृद्ध होती है लेकिन इसके मूल व्याकरण और बुनियादी शब्द भण्डार में बहुत की कम परिवर्तन होता है। व्याकरण और कूल शब्द भण्डार की विशेषताएं हजारों साल तक कायम रहती है।"[9] शुक्ल जी इस बात को कह चुके हैं ''किसी भाषा का साहित्य में व्यवहार न होना इस बात का प्रमाण नहीं है कि उस भाषा का आस्तित्व ही नही था। उर्दू का रूप प्राप्त होने के पहले भी खड़ी बोली अपने देशी रूप में वर्तमान थी और अब भी बनी हुई है। साहित्य में भी कभी–कभी कोई इसका व्यवहार कर देता था।"[10] अतः यहां स्पष्ट हो जाता विद्वान द्वय किसी भाषा का परम्परागत रूप से विकासवादी दृष्टि से देखते है।

डॉ0 शर्मा कहतें है कि किसी भी समाज का धर्म बदलने से उसकी भाषा नही बदल जाती वो कहते है अनेक आक्रमण हुए, राज्यभाषा फारसी बनी, हिन्दी अन्य भाषाओं के संसर्ग में आयी पर भाषा के मौलिक रूप में परिवर्तन नही हुआ। शर्मा जी का मानना है– ''यहाँ के हिन्दुओं की कोई एक भाषा न थी; अनेक भाषाएं थी। ... अपने–अपने प्रदेश में बसी हुई जातियाँ अपनी–अपनी भाषाओं का उपयोग करती थी किसी भी जाति में से एक से ज्यादा धर्म होने पर एक से ज्यादा भाषाएं न हो जाती थी। इसी तरह अरब, ईरान, तुर्किस्तान, पठान देश आदि के मुसलमानों का धर्म एक होने पर भी उनकी भाषा, एक न थी, जैसे आज उनमें भाषागत भेद है, वैसे ही तब भी था और अब से ज्यादा ही था। इसलिएए हिन्दुओं और मुसलमानों के मिलने से किसी नयी भाषा का बनना एक निराधार कल्पना है।"[11] डॉ0 शर्मा कहते हैं खड़ी बोली भी अन्य बोलियों की भांति पहले सीमित बोली थी सीमित भले थी लेकिन जहां बोली जाती थी हिन्दू मूसलमान उसे सब बोलते थे और ऐसा ही होता भी है। गाँवों में दूसरे किसानों की तरह मुसलमान भी हिन्दुओं की भांति विविध बोलियो का प्रयोग करते थे इसलिए– ''यह समझना कि मुसलमानों या मुगल सम्राज्य के कारण खड़ी बोली फैली एक भ्रम है।"[12] इसकी जिम्मेदारी वो भारतेन्दु के हाथों सम्पन्न कराते है– '' सब से पहले भारतेन्दु ने खड़ी बोली के प्रसार का सम्बन्ध व्यापार की बढ़ती और शहरो में पछाँह के व्यापारियों के बसने से जोड़ा था। "[13]

शुक्ल जी ने हिन्दू व्यापारिक जातियों को व्यापार के लिए फैलने के साथ खड़ी बोली के फैलाव को स्वीकार करते हैं तथा डॉ0 शर्मा इसे सही मानते है पर हिन्दू व्यापारियों की जगह वो कहते हैं '' लेकिन व्यापारियों में हिन्दू ही नही थे मुसलमान भी थे।,,14 शुक्ल और शर्मा ने इस प्रकार व्यापारिक माध्यम से खड़ी बोली के विकास को स्वीकार तथा जहां तक हिन्दी उर्दू के विवाद का सवाल है तो विद्वान द्वय यही मानते है कि उर्दू खड़ी बोली का ही एक रूप थी। बालमुकुन्द गुप्त की गद्य शैली की तारीफ में शुक्ल जी लिखते है '' वे पहले उर्दू के अच्छे लेखक थे इससे उनकी हिन्दी बहुत चली हुई और फड़कती हुई होती थी।''[15] अर्थात पहले उर्दू और हिन्दी अलग रूप में न थे; डॉ0 शर्मा कहते हैं– ''हिन्दी –उर्दू विवाद को इतना जहरीला बना दिया गया है कि बहुत से लोग भूल गये है कि ये एक ही बोलचाल की भाषा के दो रूप हैं इनका तमाम साहित्य भला बुरा जो कुछ हो एक ही जाति का साहित्य है। ''[16]डॉ0 रामविलास शर्मा शुक्ल जी के उस मत का विरोध करतें है जहां वो उर्दू को कृत्रिम कहते हैं ''उर्दू में बोलचाल का रूप मौजूद है और बहुत अच्छी तरह भी मौजूद है। ''[17] डॉ0 शर्मा '' आधुनिक हिन्दी साहित्य का उत्थान काल हिन्दी भाषी जनता के जातीय और जनवादी साहित्य का उत्थान काल मानते है।''[18] शुक्ल जी ने दिखलाया है कि खड़ी बोली का प्रसार विविध भाषाओं में हुआ तो, पर हर जगह एक सा नहीं इसी कसर को पूरा किया भारतेन्दु व उनके मण्डल के लोगो ने। आचार्य शुक्ल संस्कृत से भी लदी भाषा के रूप में खड़ी बोली नही स्वीकार करते तथा गोविन्द नारायण मिश्र जैसे लेखकों के समास अनुप्रास से गुंथे शब्द 'गुच्छों' पर व्यंग किया है।'' भारतेन्दु ने जैसी सरस हिन्दी लिखी वैसी बहुत कम लोग लिख पाते हैं इसका एक कारण यह भी है कि उन्होंने हिन्दी के सहज रूप को पहचाना था और उसे संस्कृत के साँचे में ढालने की कोशिश की थी।''[19] आचार्य शुक्ल ने हिन्दी और संस्कृत के सम्बन्ध की ओर बार–बार ध्यान दिया है; अरबी–फारसी के मुकाबले उसका संस्कृत परिवार की ही भाषा है। अरबी–फारसी के मुकाबले उसका संस्कृत से शब्द लेना भी स्वाभाविक है वही यह भी कहा है कि संस्कृत से अलग हिन्दी का अपना स्वाभाविक विकास भी अवश्यम्भावी है।

इस प्रकार खड़ी बोली को सरल, सरस, प्रवाहमय, बनाकर भारतेन्दु ने उसको अपनी पहचान दिलवाई जिससे आज हिन्दी खड़ी बोली रुप में स्थापित होकर अपना अस्तित्व सम्पूर्ण भारत पर जमा सकी है। यद्यपि उसका विकास तो क्रमबद्ध हुआ पर उचित अवसर पर भारतेन्दु व उनके मण्डल ने इसे गढकर आधुनिक रुप प्रदान किया।

सन्दर्भ सूची–

1. हिन्दी साहित्य इतिहास, अशोक प्रकाशन (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल), पृ0 243
2. वही पृ0 243
3. वही पृ0 244
4. वही पृ0 244
5. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना (डॉ0 रामविलास शर्मा), पृ0 137
6. वही पृ0 133
7. वही पृ0 134
8. पत्रिका, आलोचना त्रैमासिक, सहस्त्राब्दी अंक–5, अप्रैल–जून 2001 (लेखः भगवान सिंह), पृ0 231
9. वही, बोएज के कथन से पृ0 231
10. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना (डॉ0 रामविलास शर्मा), पृ0 235
11. हिन्दी साहित्य इतिहास, अशोक प्रकाशन (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल), पृ0 244
12. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना (डॉ0 रामविलास शर्मा), पृ0 136
13. वही पृ0 136
14. वही पृ0 136
15. वही पृ0 137
16. हिन्दी साहित्य इतिहास, अशोक प्रकाशन (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल), पृ0 306
17. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना (डॉ0 रामविलास शर्मा), पृ0 141
18. वही पृ0 141
19. वही पृ0 143